अज्ञेय

भारतीय लेखक

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन "अज्ञेय" (7 मार्च, 1911 - 4 अप्रैल, 1987) को कवि, शैलीकार, कथा-साहित्य को एक महत्त्वपूर्ण मोड़ देने वाले कथाकार, ललित-निबन्धकार, सम्पादक और अध्यापक के रूप में जाना जाता है।[1] इनका जन्म 7 मार्च 1911 को उत्तर प्रदेश के कसया, पुरातत्व-खुदाई शिविर में हुआ।[2] बचपन लखनऊ, कश्मीर, बिहार और मद्रास में बीता। बी.एससी. करके अंग्रेजी में एम.ए. करते समय क्रांतिकारी आन्दोलन से जुड़कर बम बनाते हुए पकड़े गये और वहाँ से फरार भी हो गए। सन्1930 ई. के अन्त में पकड़ लिये गये। अज्ञेय प्रयोगवाद एवं नई कविता को साहित्य जगत में प्रतिष्ठित करने वाले कवि हैं। अनेक जापानी हाइकु कविताओं को अज्ञेय ने अनूदित किया। बहुआयामी व्यक्तित्व के एकान्तमुखी प्रखर कवि होने के साथ-साथ वे एक अच्छे फोटोग्राफर और सत्यान्वेषी पर्यटक भी थे।

असाध्य वीणा वर्ण्य विषय :

'असाध्य वीणा' लंबी कविता में 'किरीट तरु' परम सत्ता का प्रतीक है और 'प्रियंवद' व्यक्ति सत्ता का। परम सत्ता असीम और विराट है जबकि व्यक्ति सत्ता सीमित है। उस परम सत्ता से मिल जाने , उसे जान लेने की आकांक्षा हमेशा व्यक्ति सत्ता में रही है। अज्ञेय के यहाँ इस लंबी कविता में प्रियंवद(व्यक्ति सत्ता) एक लंबी साधना प्रक्रिया से गुजरता है। वह अपने आत्म(I) को उस परम सत्ता(thou) में विलीन कर देता है। इसलिए आत्म विसर्जन के जरिये वह स्वयं को परम सत्ता से जोड़ देता है। यही पूरी कविता की मूल संवेदना है। इस आत्म विस्तार की प्रक्रिया में कोई आध्यात्मिकता नहीं है। प्रियंवद की साधना हर नयी सृजना की मूल प्रक्रिया है।

असाध्य वीणा : अज्ञेय

प्रयोगवाद और नयी कविता के प्रवर्तक "अज्ञेय" जी ने सभी विधाओं में अपनी अदभुत प्रयोगात्मक प्रगति का परिचय दिया है अज्ञेय स्वभाव से ही विद्रोही थे उनकी यह विद्रोही भावना उनके द्वारा रचे साहित्य में भी विविध रूपों में भी प्रतिफलित हुई।

साहित्यिक-सृजन के क्षेत्र में अज्ञेय जी ने एक साथ कवि ,कथाकार , आलोचक, संपादक, आदि विविध रूपों में साहित्यिक प्रेमियों को लुभाया तो दूसरी ओर व्यवहारिक जगत में फोटोग्राफी, चर्म-शिल्प, पर्वतारोहण, सिलाई- कला आदि से लोगो को चौंकाया । लेकिन उनका कवि व आलोचक व्यक्तित्व ही अधिक लोकप्रिय हुआ।

कवि क्षेत्र में उनका सबसे विशिष्ट अवदान यह है कि उन्होंने तत्कालीन परिवेश के अनुकूल कविता को जीवन की अनुरुपता में ढालकर नई काव्यात्मक चेतना के लिए एक नया वातावरण रचा।

वैसे तो अज्ञेय प्रगीतात्मक अभिव्यक्ति वाली छोटी कविताओं के कवि माने जाते हैं किंतु उन्होंने एक लम्बी कविता भी लिखी है– "असाध्य वीणा "। यह उनकी एक मात्र लंबी कविता है जिसकी रचना 'रमेशचन्द्र शाह' के अनुसार 18–20 जून ,**1961** के दौरान हुई थी। यह कविता अज्ञेय के काव्य–संग्रह **"आंगन के पार द्वार "** में संग्रहीत है।

"असाध्य वीणा" एक जापानी पुराकथा पर आधारित है यह कथा 'आकोकुरा' की पुस्तक "द बुक ऑफ टी" में 'टेमिंग ऑफ द हार्प' शीर्षक से संग्रहीत है। श्री नरेन्द्र शर्मा ने अपने एक लेख में वह कथा इस प्रकार दी है लुंगामिन खाल में एक विशाल कीरी वृक्ष था , जिससे इस वीणा का निर्माण किया गया था। अनेक वादक कलाकार प्रयत्न करके हार गए पर वीणा नहीं बजा सके इसीलिए इसका नाम "असाध्य वीणा" पड़ गया। अंत में बीनकारों का राजकुमार पीवो ही उस वीणा को साध सका।

इस वीणा से उसने ऐसी तान छेडी कि उससे तरह तरह की स्वर लहरियां फूट पडी। कभी उसमे से प्रेम गीत निकलते, तो कभी युद्ध का राग सुनाई पडता है। लेकिन अज्ञेय जी द्वारा रचित 'असाध्य वीणा' कविता

अज्ञेय जी द्वारा रचित 'असाध्य वीणा' कविता में कथा नितांत भारतीय संदर्भों में ही घटित होती है और इस तरह घटित होती है कि उसका अभारतीय रूप धुल जाता है। दूसरे शब्दों में अज्ञेय ने एक अभारतीय कथा के आख्यान को एक भारतीय कविता के आख्यान में अदभुत काव्य-कौशल के साथ घुलनशील बना दिया है। इस घुलनशील से जो काव्यानुभव प्राप्त होता है वह इस कविता में प्रस्तुत दो भिन्न संस्कृतियों के आख्यानों की सीमा रेखाओं का अतिक्रमण करता प्रतीत होता है।

अज्ञेय जी ने इस कथा का भारतीयकरण करते हुए बताया है कि किरीटी नामक वृक्ष से यह वीणा वज्रकीर्ति ने बनाई थी। लेकिन राजदरबार के समस्त कलावंत इस वीणा को बजाने का प्रयास करते हुए हार गये किन्तु सबकी विद्या व्यर्थ हो गई क्योंकि यह वीणा तभी बजेगी जब कोई सच्चा साधक इसे साधेगा।

अन्त में इस 'असाध्य वीणा' को केशकम्बली प्रियंवद ने साधकर दिखाया।जब केशकम्बली प्रियंवद ने असाध्य वीणा को बजाकर दिखाया तब उससे निकलने वाले स्वरों को राजा , रानी और प्रजाजनों ने अलग-अलग सुना। किसी को उसमें ईश्वरीय का

अलग सुना। किसी को उसमें ईश्वरीय कृपा सुनाई पड़ रही थी तो किसी को उसकी खनक तिजोरी में रखे धन की खनक लग रही थी । किसी को उसमें से नववधू की पायल की रूनझुन सुनाई दे रही थी तो किसी को उसमें शिशु की किलकारी की ध्वनि सुनाई पड़ रही थी।

वस्तुत : असाध्य वीणा जीवन का प्रतीक है, हर व्यक्ति को अपनी भावना के अनुरूप ही उसकी स्वर लहरी प्रतीत होती है । व्यक्ति को अपनी भावना के अनुरूप ही सत्य की उपलब्धि होती है तथा भिन्न-भिन्न व्यक्तियों को कला की प्रतीति भिन्न-भिन्न रूप में इसलिए होती है, क्योकि उनकी आन्तरिक भावनाओं में भिन्नता होती है । इससे यह भी ध्वनित होता है कि कला की विशिष्टता उसके अलग-अलग सन्दर्भों में , अलग-अलग अर्थो में होती है।

'असाध्य वीणा' को वही साध पाता है जो सत्य को एवं स्वयं को शोधता है या वो जो परिवेश और अपने को भूलकर उसी के प्रति समर्पित हो जाता है ।

यह बाहर से भीतर मुडने की प्रक्रिया है जिसे अंतर्मुखी होना भी कहा जा सकता है। बौद्ध दर्शन में इसे 'तथता' कहा गया है जिसमे स्वयं को देकर ही

अंतर्मुखी होना भी कहा जा सकता है। बौद्ध दर्शन में इसे 'तथता' कहा गया है जिसमे स्वयं को देकर ही सत्य को पाया जा सकता है, अज्ञेय जी यही कहना चाहते हैं इस कविता के माध्यम से।

असाध्य वीणा कविता **चीनी(जापानी) लोक कथा** पर आधारित है, जो 'ओकाकुरा' की पुस्तक 'दी बुक ऑफ़ टी' में संग्रहित है। यह कविता अज्ञेय के काव्य संग्रह 'आँगन के पार द्वार' (1961) में संकलित है।

आँगन के पार द्वार कविता के तीन खण्ड है –

1. अंतः सलिला
2. चक्रान्त शिला
3. असाध्य वीणा

असाध्य वीणा की संक्षेप में कहानी यह है कि एक राजा के पास वज्रकीर्ति द्वारा निर्मित्त एक ऐसी वीणा थी जिसे कोई साध नहीं पाया था। अन्ततः राजा के निमंत्रण पर एक बार प्रियचंद केश कंबली नामक एक साधक उसकी सभा में उपस्थित हुआ। उसने वीणा को साधकर दिखला दिया। उसके स्वर में सभा में उपस्थित सभी व्यक्तियों ने अपना–अपना सत्य पाया। असाध्य वीणा की रचना किरीट तरू से की गई थी। यह वृक्ष भव्य और दिव्य जीवन का प्रतीक था। वीणा को बजाने के लिए सच्ची स्वर सिद्धि चाहिए।

कवि ने असाध्य वीणा में सृजनात्मक रहस्य को समझाने का प्रयत्न किया है। सम्पूर्ण समर्पण के द्वारा श्रेष्ठ रचना संभव है। वैयक्तिक अह्म का विस्मरण कर जब साधक सृष्टि के साथ लयबद्ध हो जाता है तब रचनात्मक चमत्कार पैदा होता है। प्रियबंद के वीणा साधे जाने पर जो संगत अवतरित होता है उसका प्रभाव व्यापक है। वह एक ही समय में अनेक व्यक्तियों के लिए अलग-अलग रूपों को अभिव्यक्ति देता है। अन्त में साधक कहता है – शून्य और मौन के द्वारा वीणा को साधना संभव हुआ। अज्ञेय के लिए रचना की बड़ी सार्थकता उस गरिमा में निहित है जो मौन और शून्य से फूटती है। अज्ञेय ने इस कविता में बौद्ध धर्म के तथता सिद्धान्त की ओर ध्यान आकर्षित किया है।